CHETANA

CIJE CHETANA - NATIONAL JOURNATIONAL PROPERTY OF EDUCATION

International Journal of Education

Impact Factor SJIF=5.689

Peer Reviewed/ Refereed Journal

ISSN-Print-2231-3613 Online-2455-8729



Prof. A.P. Sharma Founder Editor, CIJE (25.12.1932 - 09.01.2019)

Received on 28th July 2020, Revised on 9th August 2020, Accepted 18th August 2020

आलेख

आल्ह खंड: लोकसंवाद में वीरता की अमर गाथा

* सूर्यप्रकाश

शोधार्थी, कश्मीर अध्ययन केंद्र हिमाचल प्रदेश केंद्रीय विश्वविद्यालय

ईमेल- suryaprakash013@gmail.com, मोबाइल- 9871556013

मुख्य शब्द – मल्टीमीडिया, विद्यालयी स्तर मल्टीमीडिया, शैक्षिक अनुसंधान मल्टीमीडिया आदि।

सार संक्षेप

मीडिया की परिभाषा उसके तीन कामों का जिक्र करती है, सूचना, शिक्षण एवं मनोरंजन। भले ही इस दौर के मीडिया की पैकेजिंग में सूचना और शिक्षण के तत्व कम हुए हैं और मनोरंजन का मसाला ज्यादा है। लेकिन भारत की लोककलाएं जनसंचार का वह पक्ष हैं, जो आम लोगों का उनकी बोली में मनोरंजन ही नहीं करतीं बल्कि सूचित और शिक्षित भी करती हैं। भारत में संवाद और संचार की परंपरा मानव सभ्यता के विकास के साथ चलती रही है। धार्मिक ग्रंथ, प्राचीन साहित्य से लेकर देश के कोने-कोने की लोककलाएं संवाद का सशक्त माध्यम रही हैं। ऐसा ही एक लोक काव्य है, उत्तर प्रदेश के बुंदेलखंड क्षेत्र का आल्ह खंड, जिसे जनसामान्य में आल्हा के नाम से जाना जाता है और इसके गवैये अल्हैत कहलाते हैं। जनसंचार के माध्यम भले ही आज रेडियो, टीवी, अखबार, इंटरनेट और तमाम तकनीकें हों, लेकिन जब ये न थीं, जब गूगल बाबा न थे तो निश्चित तौर पर ऐसी लोक कलाएं ही आम जन के लिए ज्ञान का स्रोत थीं। आल्हा काव्य एक तरफ भारतीय लोक का रसपूर्ण मनोरंजन करता है तो दूसरी तरफ जीवन के कठिन पहलुओं को लेकर सहजता से शिक्षित भी करता है। राजा का दायित्व जनता के प्रति क्या हो, सेना किस प्रकार एकजुट हो, पारिवारिक संबंधों की गरिमा क्या रहे और समाज के प्रति सरोकर क्या हों, जीवन के ऐसे तमाम पक्षों पर आल्हखंड सुरुचिपुर्ण शिक्षण देता है।

प्रस्तावना

12वीं सदी में रचित आल्ह खंड का कोई एक विधिवत ग्रंथ उपलब्ध नहीं है। इसके बावजूद एक बड़े हिंदी क्षेत्र में इसकी लोकप्रियता को रामचिरतमानस के बाद दूसरे स्थान पर रखा जा सकता है। जगनिक द्वारा रचित 'आल्हखंड' उपलब्ध नहीं है। फिर भी लोककंठ में सैकड़ों वर्षों तक यह ऐसा बसा रहा कि 1865 में फर्रुखाबाद के कलेक्टर रहे अंग्रेज अधिकारी चार्ल्स इलियट ने इसका संकलन कराया। यह अवधी-बुंदेली मिश्रित शैली में है और सिर्फ काव्य रूप में ही है। मध्य प्रदेश की बघेली बोली, बिहार और पूर्वी यूपी की भोजपुरी और उत्तर बिहार की मैथिली

बोली में भी आल्हा का काफी प्रचार है। इसके अलावा उत्तर प्रदेश के ही ब्रज और रुहेलखंड क्षेत्र में भी आल्हा लोक बोली में गूंजता है। क्षेत्र के विस्तार के साथ आल्हा के गायकों की बोली बदल जाती है, वाद्य यंत्रों में कुछ अंतर दिखता है, लेकिन संदेश एक ही है। आमतौर पर इसे ढोल, मंजीरे और खंजड़ी के साथ गाया जाता है।

आल्हा की लोकप्रियता और प्रभाव को यूं भी समझ सकते हैं कि भारत से होते हुए ब्रिटेन तक पहुंचा है, जहां इस पर काफी शोध हुए हैं और साहित्य भी लिखा गया है। आल्ह खंड के एक हिस्से 'ब्रह्मा का विवाह' का अंग्रेजी में सर जॉर्ज ग्रियर्सन ने 'The Lay of Brahma's Marriage: An Episode of the Alh-Khand' शीर्षक से अनुवाद किया है। आयरिश मूल के ग्रियर्सन 19वीं सदी में भारत में इंडियन सिविल सर्विसेज के तहत ब्रिटिश शासन के लिए काम कर रहे थे। हालांकि उनकी भारतीय भाषाओं और लोककलाओं में गहरी रुचि थी। यही वजह थी कि उन्होंने आल्ह खंड के इस हिस्से का अनुवाद किया था। सबसे पहले ब्रिटिश अधिकारी सर चार्ल्स इलियट ने आल्हा को लिपिबद्ध कराने का काम किया था। दरअसल इसकी रचना का किस्सा भी बेहद रोचक है। 1865 में फर्रुखाबाद के कलेक्टर रहे अंग्रेज अधिकारी चार्ल्स इलियट की मुलाकात कुछ अल्हैतों (आल्हा गायन करने वाले) से हुई थी। आल्हा सुनकर इलियट मंत्रमुग्ध हो गए और फिर उनकी रुचि ऐसी बढ़ी कि उन्होंने एक गवैये को नौकरी पर ही रख लिया और उससे 'आल्ह खंड' के प्रचलित सभी किस्सों को लिपिबद्ध कराया। इलियट के प्रयास से 23 खंडों का आल्हा प्रकाशित हुआ। इसके बाद फिर कई प्रयास हुए और आज आल्ह खंड की कई रचनाएं उपलब्ध हैं। उनके अलावा एक और ब्रिटिश अफसर विलियम वाटरफील्ड ने 1860 में 'Lay of Alha' शीर्षक से आल्ह खंड के हिस्से का अंग्रेजी अनुवाद किया था। उनकी इस रचना को इंग्लैंड की ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस ने प्रकाशित किया था। बंगाल और बिहार में प्रशासक के तौर पर काम करने वाले सर जॉर्ज ग्रियर्सन ने आल्ह खंड की लोकप्रियता को लेकर लिखा है कि पटना से दिल्ली के बीच में इससे लोकप्रिय कथा कोई दूसरी नहीं है।

'आल्ह खंड' के विस्तार में जाने से पहले पहले हमें इसके ऐतिहासिक परिप्रेक्ष्य और किरदारों के बारे में भी जानना होगा। बुंदेलखंड में स्थित महोबा पर 12वीं सदी में चंदेल राजपूत बंश के राजा परमाल देव का शासन था। उनके सेनापित थे, आल्हा और ऊदल। दोनों ही सगे भाई थे और बनाफर राजपूत थे। इन दोनों की वीरता पर ही राजा परमाल देव के दरबार में किव जगिनक ने आल्ह खंड की रचना की थी। भले ही उनकी यह रचना उपलब्ध नहीं है, लेकिन जनश्रुतियों में ऐसी व्याप्त है कि उनके संकलन से ही कई रचनाएं प्रकाशित हो चुकी हैं। राजा परमाल देव और आल्हा उदल दिल्ली के राजपूत शासक पृथ्वीराज चौहान के समकालीन थे। आल्ह खंड में कुल 52 हिस्से हैं और हर हिस्से में युद्ध का वर्णन है, जिसमें आल्हा और ऊदल की वीरता का बखान किया गया है। इसके अलावा आल्हा ऊदल के मौसेरे भाई मलखान एवं सुलखान और राजा परमाल देव के बेटे ब्रह्मा अहम किरदार हैं।

आल्ह खंड में राजा परमाल की पत्नी मलहना के भाई माहिल का नकारात्मक किरदार चित्रित किया गया है। कहा जाता है कि राजा परमाल देव ने महोबा के राजा बासुदेव परिहार को परास्त कर महोबा पर जीत हासिल की थी और फिर उनकी बेटी मलहना से स्वयं विवाह किया था। इसके अलावा उनकी दो अन्य बेटियों देवला और तिलका का विवाह अपने दो बनाफर राजपूत सेवकों क्रमश: दसराज और बच्छराज से करा दिया था। इन्हीं दसराज के बेटे आल्हा और ऊदल थे। ऊदल को उदय सिंह भी कहा जाता है। इसके अलावा तिलका और बच्छराज के पुत्र थे, मलखान और सुलखान। महोबा पर भले ही परमाल का शासन था, लेकिन बुंदेलखंड के ही उरई के शासक और बासुदेव परिहार के बेटे माहिल को यह कभी स्वीकार नहीं था। उसे हमेशा यह लगता था कि परमाल देव ने महोबा को उनके पिता को हराकर जीता है और उसके वास्तविक

अधिकारी वह हैं। कहा जाता है कि इसी के चलते वह अकसर ऐसे कुत्सित प्रयत्न करते थे कि महोबे की सेना किसी युद्ध में रत रहे। हालांकि एक तथ्य यह भी है कि पृथ्वीराज चौहान से युद्ध में माहिल के बेटे अभय सिंह ने भी हिस्सा लिया था और वीर गति को प्राप्त हुआ था।

आल्ह खंड के बारे में बात करते हुए महोबा नगर के बारे में जानना भी जरूरी है, जिसके इर्द-गिर्द यह पूरा काव्य रचा गया है। महोबा को महोत्सव नगर के नाम से चंद्रवर्मन उर्फ नन्नुक ने स्थापित किया था, जो झांसी से 150 किलोमीटर की दूरी पर स्थित है। चंद्रवर्मन को ही चंदेल राजवंश का संस्थापक माना जाता है। चंदेलों से पहले यहां गहरवार और प्रतिहार राजपूतों का शासन था। पन्ना के चंद्र वर्मन ने प्रतिहार शासकों को परास्त कर महोबा पर सत्ता कायम की थी और इस शहर को स्थापित किया था। उनके बाद कई और प्रतापी चंदेल शासक हुए, जिन्हें प्रमुख नाम विजयी-पाल (1035-1045 ई.) और कीर्तिवर्मन (1060-1100 ई.) का है। कीर्तिवर्मन को कीरत सागर झील का निर्माण कराया था। कहा जाता है कि पृथ्वीराज चौहान और आल्हा-ऊदल के बीच पहली लड़ाई इस कीरत सागर के नजदीक ही हुई थी। आज भी इस कीरत सागर का महोबा में अस्तित्व मिलता है। कीर्तिवर्मन के बाद मदन वर्मन प्रमुख शासक थे, जिनका शासन 1128-1164 ई. के बीच रहा। इनके बाद राजा परमाल के हाथों में महोबा की सत्ता की बागडोर चली गई थी, जिनके सेनापित आल्हा-ऊदल थे। आज भी महोबा में चंदेल राजपूतों का बाहुल्य है, जिससे यह पृष्टि होती है कि एक दौर में चंदेल वंशी राजपूतों का प्रभुत्व रहा होगा।

जब आल्हा-ऊदल से परास्त हुई पृथ्वीराज की सेना

आल्हा ऊदल की वीरता को इससे आंका जा सकता है कि जिन पृथ्वीराज चौहान का भारत के इतिहास में अप्रतिम वीरता के लिए जिक्र किया गया है, उनकी सेना भी इन दोनों भाईयों से युद्ध में मात खाकर लौट गई थी। पृथ्वीराज चौहान और महोबा की सेना के बीच पहले युद्ध की कहानी भी काफी रोचक है। कहा जाता है कि पृथ्वीराज चौहान की सेना एक बार तुर्की सेना का पीछा करते हुए राह भटक गई थी। सेना में पृथ्वीराज चौहान के अलावा उनके सेनापित चामुंडाराय भी मौजूद थे। किवदंती है कि इस दौरान पृथ्वीराज चौहान ने परमाल की पत्नी मलहना की सुंदरता के बारे में सुना तो रीझ गया और महोबे पर हमला कर दिया। इस हमले के जवाब में महोबा के सेना ने वीरता से लड़ाई लड़ी और आल्हा ऊदल के नेतृत्व में चौहान की सेना को पीठ दिखाकर भागने पर मजबूर कर दिया।

परमाल के बेटे पर मोहित थी पृथ्वीराज की पुत्री बेला

एक किवदंती है कि बनाफर राजपूतों को क्षत्रिय समाज में कमतर माना जाता था और कोई भी उनसे अपनी बेटी का ब्याह नहीं करना चाहता था। ऐसे में हर विवाह में लड़ाई का जिक्र है और विजेता होने के पश्चात ही विवाह संपन्न होता है। आल्हा का विवाह हो या फिर उनके छोटे भाई ऊदल का विवाह, इन सभी का फैसला युद्ध के जिए ही हुआ था। कहा यह भी जाता है कि आल्हा और ऊदल की वीरता के चलते एक बार पृथ्वीराज चौहान की सेना भी पीठ दिखाकर भाग गई थी। हालांकि दूसरी बार पृथ्वीराज चौहान से जंग में ही राजा परमाल की सेना पराजित हुई थी। यह जंग में विवाह के चलते ही हुई थी। किवदंती के अनुसार राजा परमाल के बेटे ब्रहमा पर पृथ्वीराज चौहान की बेटी बेला मोहित हो गई थी और दोनों ने गुपचुप विवाह कर लिया था। यह बात पृथ्वीराज को स्वीकार नहीं थी और उसने दोनों को कभी मिलने नहीं दिया।

पृथ्वीराज से युद्ध में ऊदल को मिली वीरगति

पृथ्वीराज ने महोबे पर हमला कर दिया और युद्ध छिड़ गया। युद्ध के दौरान ताहर ने ब्रह्मा को घायल कर दिया, दूसरी ओर क्रोध में ऊदल ने ताहर का वध कर दिया। ब्रह्मा की मृत्यु हो गई और बेला सती हो गई। इस युद्ध में पृथ्वीराज चौहान की विजय हुई। कहा जाता है कि इस युद्ध

में ऊदल की मृत्यु हो गई थी। यही नहीं अप्रतिम योद्धा कहे जाने वाले मलखान और सुलखान को भी इस युद्ध में वीरगित मिली थी। इसके बाद अपने भाई से अतिशय प्रेम करने वाले अल्हा के मन में वैराग्य उत्पन्न हो गया था। कहा जाता है कि अल्हा ऊदल ने नाथ संप्रदाय अपना लिया था। कई स्रोतों के मुताबिक आल्हा-ऊदल का पृथ्वीराज चौहान से दूसरा युद्ध 1182 में हुआ था, जबिक पृथ्वीराज की मृत्यु की 1192 में मोहम्मद गोरी से जंग में हुई थी। किवदंती है कि ब्रह्म की युद्ध में मौत के बाद उसकी पत्नी बेला भी उसकी चिता के साथ ही शहीद हो जाती है। इस प्रसंग को बेहद दुख के साथ गाते हुए अल्हैत कहते हैं-

सावन सारी सोनवा पहिरे, चौड़ा भदई गंग नहाय, चढ़ी जवानी ब्रह्म जूझे, बेलवा लेई के सती होइ जाय।

52 खंडों में है आल्हा

आल्हा की शुरूआत पृथ्वीराज चौहान व संयोगिता के स्वयंवर से होती है, अलग-अलग भाग में अलग-अलग कहानियां हैं, ज्यादातर भाग में युद्ध ही है। आखिरी भाग में महोबा की राजकुमारी बेला के सती होने की कहानी है। आल्हा में कुल 52 खंड हैं, जिनमें से प्रमुख हैं- परमाल का विवाह, महोबा की लड़ाई, गढ़ माड़ों की लड़ाई, नैनागढ़ की लड़ाई, विदा की लड़ाई, महला-हरण मलखान का विवाह, आल्हा की निकासी, लाखन का विवाह, बेतवा नदी की लड़ाई, लाखन और पृथ्वीराज की लड़ाई, बेला सती आदि।

आल्ह खंड को लेकर क्या कहते हैं आचार्य रामचंद्र शुक्ल

आल्ह खंड की रचना करने वाले किव जगनिक के बारे में कहा जाता है कि वह परमाल देव के दरबारी किव थे। जनकिव जगनिक नाटक के रचियता डॉ. कुंवर चंद्रप्रकाश सिंह ने लिखा है कि जगनिक और आल्हा के छोटे भाई ऊदल बचपन में ही निराश्रित हो गए थे। इसके बाद उन्हें राजा परमाल की पत्नी मलहना ने ही अपने पुत्र के समान पाला था। भले ही जगनिक परमाल के दरबार में किव थे, लेकिन मलहना उनके लिए मां के समान थीं। इस बात को इससे भी बल मिलता है कि तमाम शोध ग्रंथों और लेखकों ने जगनिक के परिवार की पृष्टि नहीं की है। यहां तक कि उनकी जाति को लेकर भी लेखक एकमत नहीं हैं। आचार्य रामचंद्र शुक्ल ने हिंदी साहित्य का इतिहास पुस्तक में किव जगनिक को लेकर अहम टिप्पणी की है। उन्होंने लिखा है, 'ऐसा प्रसिद्ध है कि कालिंजर के राजा परमाल के यहां जगनिक नामक भाट थे, जिन्होंने महोबा के दो देश प्रसिद्ध वीरों आल्हा और ऊदल के वीर चरित्र का वर्णन काव्य के रूप में लिखा था, जो इतना लोकप्रिय हुआ कि उसके गीतों का प्रचार पूरे उत्तरी भारत में हो गया। जगनिक के काव्य का आज कहीं अता-पता नहीं है, लेकिन उसके आधार पर प्रचलित गीत हिंदी भाषी प्रांतों के गांव-गांव में सुनाई पड़ते हैं। ये गीत आल्हा के नाम से प्रसिद्ध हैं और बरसात में गाए जाते हैं।' रामचंद्र शुक्ल ने जगनिक को वीर गाथा काल के महत्वपूर्ण कवियाों में शामिल किया है।

1,000 साल से लोककंठ में मौजूद

आल्हा का भले ही कोई निश्चित ग्रंथ या भाषा टीका नहीं है, लेकिन लोगों के जेहन में यह इतना गहरे उतरा है कि पीढ़ियों रिसते हुए 1,000 साल का सफर तय कर चुका है। बुंदेली, अवधी, भोजपुरी, रुहेली, ब्रज, बघेली, कौरवी और मैथिली समेत लगभग पूरी हिंदी पट्टी में वीर रस के

इस अनुपम काव्य की गहरी मान्यता है। हर बोली के अल्हैत यानी आल्हा गाने वाले अपनी शैली में ढाल कर वीररस से लोगों को सराबोर करते हैं। आल्हा के पाठ को पंवाड़ा कहा जाता है। उत्तर प्रदेश, मध्य प्रदेश, बिहार में इसका लोकजीवन पर ऐसा प्रभाव है कि तमाम लोकोक्तियां और कहावतें लोगों को आल्हा से मिलती हैं।

आल्हा सुन विश्व युद्ध में लड़ने गए थे सैनिक

हिंदी क्षेत्र के लोकमानस में आल्हा कितने गहरे उतरा है और इसका संचार पक्ष कितना सशक्त है, इसका अंदाजा इसी बात से लगाया जा सकता है कि 1914-18 और 1939-45 के पहले और दूसरे विश्व युद्ध में अंग्रेजों ने सैनिकों में उत्साह भरने के लिए छावनियों में इसके कार्यक्रम आयोजित कराए। यही नहीं लंबे समय तक पुलिस की पासिंग आउट परेड में भी जवानों में वीरता और कर्तव्यपरायणता के लिए आल्हा सुनाया जाता रहा।

अंग्रेजों ने कराया कई खंडों का अनुवाद

भले ही आल्हा हिंदी क्षेत्र की अमूल्य धरोहर है, लेकिन विदेशी विद्वानों ने स्वदेशी लेखकों से पहले ही इस पर काम शुरू कर दिया था। हिंदी के प्रसिद्ध ब्रिटिश मूल के इतिहास लेखक ग्रियर्सन ने आल्हा की लोकप्रियता को देखते हुए इसके कई खंडों का अंग्रेजी में अनुवाद कराया था। इनमें 'मारू प्रयूड' यानी 'माड़ो की लड़ाई' और 'नाइन लैख चेन' यानी 'नौलखा हार की लड़ाई' जैसे खंड विशेषतौर पर उल्लेखनीय हैं। यही नहीं अमेरिकी रिसर्चर डॉ. केरिन शोमर ने तो आल्हा की यशोगाथा की तुलना में यूरोप में ओजस्वी किव होमर द्वारा रचित इलियड और ओडिसी के समकक्ष स्थान दिया है। ग्रियर्सन द्वारा 'ब्रह्म का विवाह' खंड का अंग्रेजी अनुवाद 'द ले ऑफ ब्रह्मज मैरिज: एन एपिसोड ऑफ द आल्हखंड' आज भी उपलब्ध है। ग्रियर्सन ने इसकी भूमिका में लिखा है कि पटना से लेकर दिल्ली तक आल्हा से अधिक कोई भी कहानी जनमानस में लोकप्रिय नहीं है।

सावन में आल्हा सुनने का है प्रचलन, इससे भी जुड़ी है एक कहानी

दरअसल चंदेल वंश के 15वें शासक परमाल के राज्य महोबा पर पहली बार पृथ्वीराज चौहान ने उस समय हमला किया था, जब रानी मलहना रक्षाबंधन के मौके पर कीरतसागर में पूजा के लिए जा रही थी। इसके जवाब में आल्हा-ऊदल के नेतृत्व में महोबे की सेना ने वीरता से युद्ध लड़ा और पृथ्वीराज की सेना को भागना पड़ा। कहा जाता है कि यह लड़ाई तीन दिन तक चली थी। आज भी इस दिन के उपलक्ष्य में रक्षाबंधन के तीसरे दिन महोबा में कजली महोत्सव का आयोजन होता है। इस दिन महोबा के लोग कीरत सागर के नजदीक स्थित गोखर हिल में जाकर गजांतक शिव की पूजा करते हैं।

गांवों की चौपारों से निकल यूट्यूब तक पहुंचा आल्हा

आल्हा मूल रूप से बुंदेलखंड की धरोहर है, लेकिन हिंदी पट्टी के हर क्षेत्र ने इसे अपनी शैली में ही इस तरह से अपना लिया है कि यह लोकजीवन का अंग बन गया है। आम मान्यता है कि गंगा दशहरा से लेकर दशहरे तक यानी बरसात के मौसम में इसका गायन किया जाता है। इसके लिए कहा भी जाता है कि-

'भरी दुपहरी सरवन गाइय, सोरठ गाइये आधी रात। आल्हा पंवाड़ा वा दिन गाइय, जा दिन झड़ी लगे बरसात।'

गायन की एक नई शैली बना आल्हा

बदले सामाजिक जीवन में लोगों की बढ़ती व्यस्तता और ग्रामीण जीवन पर असर के चलते गांवों की चौपारों में अब इनका आयोजन इक्के-दुक्के ही होता है, लेकिन तकनीक के युग में यह मोबाइल और यूट्यूब तक भी अपनी पहुंच बना चुका है। संगीत के क्षेत्र में भी आल्हा की शैली का इन दिनों जमकर इस्तेमाल हो रहा है। कई भजनों से लेकर फिल्म 'मंगल पांडे' के गीत 'मंगल-मंगल' में भी इसकी शैली का इस्तेमाल किया गया है।

वीर रस से पूर्ण है आल्ह खंड, अतिशयोक्ति में किया गया वर्णन

आल्हा खंड की रचना की गहराई से विवेचा करें तो इस में अतिशयोक्ति अलंकार का काफी प्रयोग किया गया है। किसी भी एक दृश्य का चित्रण करने से पहले लंबी भूमिका सहारा लिया गया है और अतिशयोक्ति का काफी इस्तेमाल किया गया है। जैसे पृथ्वीराज और महोबा की सेना की लड़ाई का प्रसंग किव ने इन शब्दों में किया है-

ना मुंह फेरैं, महोबे वाले, ना ई दिल्ली के चौहान।
कीरतसागर मदनताल पर, क्षत्रिन कीन खूब मैदान।
किट किट गिरैं बछेड़ा, चेहरा गिरैं सिपाहिन केर,
बिना सूंद्धि के हाथी घूमैं, मारें एक एकको हेर।
चौड़ा ऊदल का रण सोहै, धांधूं बनरस का सरदार,
सवापहर लों चली सिरोही, निदया बही रक्त की धार।

आल्हा के कीरत सागर की लड़ाई खंड के इस काव्य का अर्थ है- न महोबे के सैनिक पीछे हटने को तैयार हैं और न ही दिल्ली के चौहान पीछे हट रहे हैं। कीरत सागर और मदनताल पर क्षत्रियों के बीच घमासान युद्ध देखने को मिलता है। युद्ध में शामिल बैल, घोड़े और हाथियों के सिर कटकर गिरते हैं। सिपाहियों के सिर धड़ अलग होकर गिर रहे हैं। बिना सूंड के हाथी रण क्षेत्र में घूम रहे हैं। ऊदल और पृथ्वीराज के सेनापित चामुंडाराय का युद्ध देखते ही बनता है। देर शाम तक लड़ाई चलती है और नदी में रक्त बह निकलता है। किव ने जिन शब्दों में युद्ध का चित्रण किया है, उनसे वीर रस का संचार होता है।

इसी प्रकार पहले खंड संयोगित स्वयवंर को भी किव ने बेहद रोचक शब्दों में प्रस्तुत किया है। राजा जयचंद की छटा का वर्णन करते हुए किव ने लिखा-

राजा जयचंद कनउज वाला, आला सकल जगत सिरनाम।
को गति बरनै त्यहिमंदिर कै, सो है सोन सरिस त्यहिधाम।
केसरि पोतो सब मंदिर है, औ छति लागि वनातन केर।
सुवा पहाड़ी तामें बैठे, चक्कस गड़े बुलबुलन केर।

लाल औ मैनन कै गिनती ना, तीतर घूमिरहे सब ओर।
पले कबूतर कहुं घुटकत हैं, कहुं-कहुं नाचि रहे हैं मोर।
लागि कचहरी है जयचंद कै, बैठे बड़े-बड़े नरपाल।
बना सिंहासन है सोने का, तामें जड़े जवाहिर लाल।
तामें बैठो महाराज है, दिहने धरे ढाल तलवार।

कन्नौज का राजा जयचंद पूरे जगत में सिरमौर है। उसके राज्य के मंदिर की महिमा कही नहीं जा सकती, जो पूरी तरह स्वर्णजड़ित है। केसर से पुते मंदिर में तोते, बुलबुल, मैना और तीतरों की आकृतियां बनी हैं, जिनकी शोभा देखते ही बनती है। कहीं बेशुमार कबूतर बने हैं तो कहीं नाचते मोरों की आकृति है। सोने के बने और जवाहरों से जड़े सिंहासन पर ढाल तलवार लिए बैठे राजा जयचंद के दरबार में बड़े-बड़े राजा बैठे हैं।

जीवन के गूढ़ रहस्यों को सरल शब्दों में समझाते हैं अल्हैत

आल्हा की शैली और शब्दों की यह विशेषता है कि इसे आम लोग भी बेहद आसानी से समझ लेते हैं और रस लेते हैं। यही नहीं बेहद सरल शैली में आल्हा गाने वाले यानी अल्हैत पंवाड़े के बीच में ही जीवन के कई गूढ़ पहलुओं को सरल शब्दों में सामने रखते हैं। जैसे-

'राम बनइहैं तो बन जइहैं, बिगरी बात बनत बन जाय।'

यह पंक्ति कठिन से कठिन परिस्थिति में ईश्वर पर भरोसा बनाए रखने की सीख देती है।

कर्तव्य पर डटे रहने का संदेश देते हुए अल्हैत कहता है-

'पांव पिछारे हम न धरिहैं, चाहे प्राण रहैं कि जायें।'

पुत्र के समर्थ होने से माता-पिता को किस प्रकार सहारा मिलता है। इस पर आल्हा की यह एक पंक्ति सार्थकता से अपनी बात कहती है-

'जिनके लड़िका समरथ हुइगे, उनका कौन पड़ी परवाह'

स्वामी तथा मित्र के लिए कुर्बानी दे देना सहज मानवीय गुण बताए गए हैं-

'जहां पसीना गिरै तुम्हारा, तंह दै देऊं रक्त की धार'

अपने बैरी से बदला लेना सबसे अहम बात माना गया है-

'जिनके बैरी सम्मुख बैठे उनके जीवन को धिक्कार।'

इसी प्रकार ज्यादा बात करने को भी विवाद का कारण बताते हुए कहा गया है-

बात-बात मा बतबढ़ हुइगै, बातन बढ़ी चौगुनी रार

महोबा की सेना की वीरता का बखान इन शब्दों में किया गया है-

बड़े लड़ैया महोबा वारे, इनकी मार सही न जाय,
एक को मारैं, दुई मार जाएं, तीसर हूक खाए मर जाए,
मरे के नीचे जिंदा लुक गओ, आगे लूथ लई लटकाय।

सामाजिक समरसता का संदेश देते अल्हैत

आल्हा और ऊदल का स्तुतिगान भले ही योद्धा के तौर पर किया गया है, लेकिन जातियों से परे समूचे समाज के लिए आल्हा का नायक होना शायद इसलिए भी संभव हो पाया है क्योंकि वे शिवाजी सरीखे समावेशी सेनापित थे। जैसे महाराष्ट्र समेत देश भर में हिंदवी साम्राज्य की स्थापना के चलते जननायक बने शिवाजी के राज्य और सेना में सभी वर्गों को महत्व था, वैसी ही नीति महाबिल आल्हा की भी थी। 'आल्ह खंड' के मुताबिक, उनकी सेना में लला तमोली, धनुवा तेली, रूपन बारी, चंदर बढ़ई, हल्ला, देवा पेडित जैसे लोग सेना के मार्गदर्शक थे। आल्हखंड की पंक्तियां इसका प्रमाण हैं, जो सामाजिक समरसता का संदेश देती हैं-

'मदन गड़रिया धन्ना गूलर आगे बढ़े वीर सुलखान, रूपन बारी खुनखुन तेली इनके आगे बचे न प्रान। लला तमोली धनुवां तेली रन में कबहुं न मानी हार, भगे सिपाही गढ़ माड़ौ के अपनी छोड़-छोड़ तलवार।।'

समरसता से पूर्ण थी परमाल की सेना, मुस्लिम थे आल्हा-ऊदल के गुरु

अल्हा-ऊदल की बात करें और ताला सैयद (सैयद तालन) की चर्चा न हो तो प्रसंग अधूरा मालूम पड़ता है। इस्लाम पंथ के अनुयायी ताला सैयद के बारे में कहा जाता है कि उन्होंने ही आल्हा-ऊदल और मलखान एवं सुलखान जैसे योद्धाओं को अस्त्र-शस्त्र की विद्या दी थी। राजा परमाल के दरबार में आने से पहले सैयद बनारस के राजा के यहां रहते थे। यही वजह है कि आल्हखंड में कई स्थानों पर उनका जिक्र बनारस वाले के तौर पर किया गया है। आल्हा समर सारावली के अनुसार इनका असली नाम सैयद मीरन था, जो गोरखपुर के ताली ग्राम के रहने वाले थे। माना जाता है कि इसी के चलते उनका नाम ताला सैयद पड़ गया था। सैयद के महोबा आने का प्रसंग भी अत्यंत रुचिकर है। महोबा एक सांस्कृतिक धरोहर पुस्तक में डॉ. आरिफ मोहम्मद राईन लिखते हैं, 'बनारस के राजा से किसी कारण से नाराज हो जाने के चलते ताला सैयद कन्नौज जा रहे थे, तभी बिठूर के मेले में उन्हें चिल्लाने व रोने की आवाजें सुनाई दीं। यह आवाज महोबा की रानी मल्हना की थी। उनके खेमे को कलिंग राय ने माहिल के उकसाने पर घेर लिया था, तभी ताला सैयद कलिंग राय से मोर्चा लिया और रानी की जान बचाई।' कहा जाता है कि इससे प्रसन्न होकर रानी ने ताला सैयद को महोबा में ही रहने को कहा। इसके बाद वह वहां शूरवीरों को प्रशिक्षण देने के काम में लग गए। आल्ह खंड में वर्णित कई युद्धों में ताला सैयद के भी समरभूमि में उतरने का जिक्र किया गया है। इस प्रसंग से स्पष्ट होता है कि राजा परमाल की सेना में सिर्फ राजपूत वीर ही शामिल नहीं थे। हिंदुओं की समस्त जातियों के अलावा इस्लाम पंथ के अनुयायी ताला सैयद भी सेना का हिस्सा थे।

बुंदेली किव जगिनक ने 'आल्ह खंड' की रचना कर भारतीय समाज को उस दौर में वीरता की गाथा सुनाई, जब देश चहुंओर विदेशी आक्रमण झेल रहा था। जगिनक की इस काव्य रचना का यही असर था कि विश्व युद्ध की छाविनयों से निकल समर में उतरने के लिए इसने सैनिकों का हौसला बढ़ाया। आज भी यह काव्य वीरता, जीवटता, सामाजिक समरसता और मानवीय गुणों का संदेश देता है। भारत के वाचाल समाज में लोककलाओं के महत्व को आल्ह खंड के अध्ययन से बखूबी समझा जा सकता है।

संदर्भ सूची

- सर जॉर्ज ग्रियर्सन, The Lay of Brahma's Marriage, कैंब्रिज यूनिवर्सिटी प्रेस, लंदन, 1923, पृष्ठ संख्या 573-74
- अयोध्या प्रसाद गुप्ता 'कुमुद', भारतीय साहित्य के निर्माता- जगनिक, साहित्य अकादमी, नई दिल्ली, 2013, पृष्ठ संख्या 51, 54
- रामचंद्र शुक्ला, हिंदी साहित्य का इतिहास, नागरी प्रचारिणी सभा, काशी, 1929, पृष्ठ संख्या 48
- http://www.abhivyakti-hindi.org/kahaniyan/vatan_se_door/2005/shauryagatha/shauryagatha1.htm
- http://ignca.gov.in/coilnet/audal002.htm
- https://books.google.co.in/books?id=kgpLBpUCufwC&pg=PA491&lpg=PA491&dq=sir+charles+elliott+fa
 rrukhabad&source=bl&ots=olK5C3Lf8w&sig=ACfU3U3ShRnZbrHgYvCP16iX0lY7RQpe3A&hl=en&sa=
 X&ved=2ahUKEwiA_PLOx9bqAhVozzgGHYN1BGgQ6AEwD3oECAoQAQ#v=onepage&q=sir%20charl
 es%20elliott%20farrukhabad&f=false
- https://mahoba.nic.in/history/
- Cynthia Talbot, The Last Hindu Emperor: Prithviraj Cauhan and the Indian Past 1200–2000, cambridge university press, london, 2016, page no. 102
- डॉ. आरिफ मोहम्मद राईन, महोबा एक सांस्कृतिक धरोहर, बी रिवर्स प्रकाशक, 2020, पृष्ठ संख्या 110

* Corresponding Author सुर्यप्रकाश

शोधार्थी, कश्मीर अध्ययन केंद्र हिमाचल प्रदेश केंद्रीय विश्वविद्यालय ईमेल- suryaprakash013@gmail.com, मोबाइल- 9871556013